

## कळमेषुत्त ( कळम रचना या फर्श – चित्र)

पुष्पा. सी. वी  
शोध छात्रा  
हिन्दी विभाग  
कालिकट विश्वविद्यालय  
केरल

'कळमेषुत्त' भित्ति चित्रकला का एक प्रारंभिक रूप है। कळमेषुत्तअपने, चित्र फर्श पर खींचा जाता है। यहाँ कलाकार अपने हाथों के द्वारा पाँच अलग-अलग वर्णों के चूर्ण से देवी देवताओं का रूप चित्रित करता है। काली, दुर्गा, अय्यप्पन, यक्षी, नाग, गंधर्व जैसी देव मूर्तियों का रूप इन चित्रों में प्रमुखतः आता है। केरल में ऐसी कई जातियाँ हैं, जो कळमेषुत्त को अपने पैतृक वृत्ति के रूप में स्वीकृत करती हैं। इन जातियों में एक है 'कुरुप्प'। आम तौर पर इसी जाति के लोग कळमेषुत्त का अनुष्ठान करते आए हैं। केरल के 'कळमेषुत्त – पाट्ट', 'मुडियेट्ट' आदि अनुष्ठान कलाओं में और त्योहारों में कळमेषुत्त का प्रमुख स्थान है। सिर्फ मंदिरों में ही नहीं, घरों में और अन्य तीर्थ स्थानों में भी 'कळमेषुत्त' – को आयोजित किया जाता है। लोगों के विश्वास के अनुसार समाज की अभिवृद्धि, रोग – निवारण, जीवन में सफलता आदि केलिए इसका आयोजन किया जाता है। वर्ण एवं चित्रों के अलावा ऐसे कई क्रिया – कर्म भी रहते हैं, जो इसके साथ जुड़े हैं।

केरल के अलग-अलग प्रदेशों में भिन्न – भिन्न प्रकार के अनुष्ठान रहते हैं जिनके अनुसार कलाकार 'कळम' ( रंगों का चित्र) बनाता है। कळम बनाने केलिए प्राकृतिक वर्णों का इस्तेमाल किया जाता है। इसमें कलाकार अपनी परंपरागत जानकारी से अर्जित कौशल तथा हुनर का प्रदर्शन करता है। कळमेषुत्तु के साथ ही 'कळम – पाट्ट' (देवी-देवता का स्तुतिगीत) भी आयोजित किया जाता है। इसमें केरल के अनोखे लोक-संगीत की अनूठी अनुभूति प्राप्त होती है। अगर अनुष्ठानों से अलग करके इसको देखा जाए तो भी कळमेषुत्तु एक अद्भुत कला विशेष मालूम होता है।

'कळम' शब्द का अर्थ है अनुष्ठानों के लिए तैयार किए गए फर्श पर खींचा गया चित्र। कळम रचने की प्रणाली को 'कळमेषुत्त' कहते हैं। इसे 'निलचित्रम' (फर्श पर खींचा गया चित्र) भी कहा जाता है। सामान्यतः कळमेषुत्त की दो परंपराएँ रहती हैं – पहला है वैदिक परंपरा, जिसमें देवताओं को ज्यामितीय आकृतियों में प्रतीकात्मक रूप में चित्रित करते हैं। दूसरा है वैदिकेतर परंपरा, जिसमें देवताओं के रूप सभी अंगों के साथ चित्रित करते हैं। पहली परंपरा 'पद्म' और दूसरी परंपरा 'कळम' नाम से जाना जाता है। पद्म में सीधी रेखाएँ, वृत्त, बिंदु, त्रिकोण जैसे ज्यामितीय रूपों का उपयोग करते हैं। उदाहरण केलिए 'भद्रकाली' कळम में गणेश की प्रस्तुति केलिए षडकोण का चित्र खींचता है।

कळमेषुत्त, त्योहारों के अवसर पर या शकवर्ष के अग्रहायण-पौष के महीनों में मनाया जाता है। दोष निवारण तथा समाज की अभिवृद्धि केलिए यह मनाया जाता है। देवी, नाग, अय्यपन आदि के मंदिरों और तीर्थस्थानों तथा घर के आंगन में भी 'कळम' रचा जाता है। यही नहीं केरल के अन्य अनुष्ठान कलाओं जैसे 'पडयणी', 'मुडियेट्ट', 'सरप्पम तुल्लल' (नाग नृत्य) आदि में भी कळमेषुत्तु का प्रमुख स्थान है।

नृततविज्ञान (मानव शस्त्र) के वैज्ञानिक 'रेडिक्लिफ ब्राउन' के अनुसार, "अनुष्ठान मनुष्य के कई भावों की रूपात्मक प्रस्तुति है"। (१) अनुष्ठान वास्तव में वैयक्तिक संवेदनाओं के स्थान पर सामाजिक संवेदनाओं को प्रकट करते हैं और समाज की एकता का निर्माण करते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि अनुष्ठानों में कलाकार जिस देवता का प्रतिनिधित्व करता है, व्यवहार में वह देवता

ही उस में काम करता है। इस कला की प्रस्तुति के दौरान प्रेक्षक भी आस्था की दिव्य अनुभूति प्राप्त करता है। ऐसे में ही कला की अपेक्षा इसमें ईश्वरीय भक्ति एवं अनुष्ठान वर्चस्व पाते हैं। अतः कला का आस्वादन पक्ष इसमें दुर्बल हो जाता है।

'कळमेषुतु' परंपरागत अनुष्ठानात्मक कलाशैली का वाहक है। यह परंपरा आज भी केरल के तमिल ब्राह्मणों के बीच प्रचलित है। 'कळम वरक्कल' (कळम रचना), 'कळम – अणियल' (चावल के गीला आटा से सजाना) आदि नाम से भी यह जाना जाता है। कभी - कभी कळम सिर्फ एक वर्ण के चूर्ण से भी खींचा जाता है जैसे ओणम, विषु, तिरुवातिरा, पूम जैसे अनुष्ठानों या त्योहारों के अवसर पर घर के आंगन और दरवाजों पर। इसे 'कोलम' कहते हैं, आमतौर पर स्त्रीयां ही इसको खींचती हैं। लेकिन कळम पुरुष ही बनाते हैं। कळम आकार में बड़ा होता है। पड़यणी, मुडियेट्ट, तोटम पाट, आदि अनुष्ठान कलाओं में देवी देवताओं के रूपों का कळम रचते हैं जैसे भगवति कळम और सर्पम तुल्लल(नाग नृत्य) में नागराज, नागयक्षी, पडिक्कलम, पवित्रकेट्ट, आदि सर्प रूपों का चित्र अंकित करते हैं। पुत्र प्राप्ति तथा प्रेत-भूत प्रवेश से रक्षा के लिए आयोजित 'कोलम तुल्लल', 'कळम पाट्टु' आदि अनुष्ठानों में भी कळमेषुतु की प्रधानता है। 'भद्रकाली पाट्टु' से संबंधित कळमेषुतु का वर्णन करते हुए 'चेलनाट अच्युतमेनोन' कहते हैं कि "कळमेषुतु का रूप तीन आयामी स्वभाव का होता है। चित्र में नाक, स्तन, आँख आदि उभरे हुए अंगों में कितनी मात्रा में चावल का आटा डालना है इसका निर्दिष्ट नियम भी है"।(२) बिना किसी उपकरण के सहारे ही कळमेषुतु के कलाकार अपने हाथों से जीवंत चित्र बनाते हैं। लेकिन 'नाग कळम' में नारियल के खोल में सात छेद डालकर उसमें चूर्ण भरता है और नियमित रूप से आकृतियाँ बनाते हैं।

**'मुडियेट्ट'** (बालों को हिला – हुलाकर किए जानेवाला नृत्य) अनुष्ठान में कळमेषुतु :

कलाकार कळम खींचते वक्त जलते दीप को सामने रखकर आराधना मूर्ति से प्रार्थना करता है। 'कळम – रचना' या 'कळमेषुतु' आमतौर पर घर के अंदर, मंदिर के चार दीवारों के अंदर अथवा किसी विशेष स्थान पर किया जाता है। घर हो या मंदिर हो कहीं भी, फर्श का शुद्ध और पवित्र होना अनिवार्य है। कम से कम दो लोग, गुरु और शिष्य मिलकर दुपहर के बाद ही कळमेषुतु शुरू करते हैं। एक विस्तृत कळम का आकार इस प्रकार आता है- सात फुट चौड़ा और नौ फुट लंबा। कळम के आकार के अनुसार शिष्यों की संख्या भी बढ़ जाती है। नहा धोकर नए कपड़े पहनकर ही 'कळमेषुतु' शुरू करते हैं। इसका पहला पड़ाव है पाट्टु अरड (ईश्वर स्तुति)। दक्षिण – पश्चिम की दिशा में बैठकर धान, चावल आदि के साथ इसकी तैयारी की जाती है।

कळमेषुतु में 'पंचलोहा' (पाँच तरह का लोहा) का बड़ा महत्व है। लोगों का मानना है कि पंचलोहा के चूर्ण से देवी रूप अगर रचा जाता है तो उसका चैतन्य बढ़ जाता है। इस चूर्ण से पूरा कळम रचना आज मुमकिन नहीं, इसी कारण पंचलोहों के स्थान पर पाँच वर्णों के चूर्ण का इस्तेमाल करते हैं – हल्दी का चूर्ण (सोने के चूर्ण के स्थान पर), चावल के आटा का चूर्ण (चांदी के लिए), हल्दी और चूना मिलाकर बनाया गया चूर्ण (तांबा के लिए), कोयले का चूर्ण (लोहे के लिए) बबूल के पत्ते का चूर्ण (सीसा धातु के लिए) इस्तेमाल करते हैं। कलाकार एकचित्त होकर देवता के रूप को ध्यान से खींचना शुरू करते हैं। कोई प्रामाणिक लक्षण ग्रंथ या श्लोक इस के लिए उपलब्ध नहीं है। एक बार कळम खींचने पर उसे बदलना या मिटाकर दूसरा बनना नहीं चाहिए। परंपरागत रूप से एवं रूढ़ि से अर्जित हुनर ही कळमेषुतु का आधार है। इसलिए हर कळम एक दूसरे से थोड़ा भिन्न भी पाया जाता है। साफ किए गए फर्श पर गोबर का परत बनाकर उसके मध्य में एक लकीर खींचते हैं जिसको 'आयुर रेखा' या 'ब्रह्म सूत्र' बताया जाता है। इसके बाद देवता के मुख, मुकुट, स्तन, कमर के नीचे के भाग आदि के क्रम में चित्र बनाया जाता है।

**नाग पूजा के लिए कळमेषुतु :**

यह एक प्रमुख संप्रदाय तथा अनुष्ठान है जिनको केरल के हिंदुओं (पुल्लुवर, ब्राह्मण, नम्ब्रन्तिर जैसे जाति के लोग) के जीवन का अनिवार्य अंग माना जाता है। भारत में, वैसे तो नागों की पूजा होती है। हमारे पुराणों में भी नागों का ईश्वरीय रूपों में आराधना देखी जा सकती है। अनुमान ऐसा अनुमान किया जाता है कि केरल में सामाजिक जीवन के साथ ही नागों की आराधना भी शुरू हुई है। नाग देवताओं को प्रसन्न करने के लिए आयोजित एक अनुष्ठान है – 'सरप्पम पाट्टु' (नाग गीत)। 'पुल्लुवा' नाम की जाति के लोग इस परंपरा का पालन करते हैं। नागों के मंदिर तथा घरों में यह अनुष्ठान देखा जा सकता है। 'पम्पिन कळम' (नाग कळम), 'नागप्पाट्टु' (नाग – गीत), 'सर्पोत्सव' (नागों के मंदिर में उत्सव), 'पाम्पु तुल्लल' (नाग नृत्य) आदि नाम से भी यह जाना जाता है। अक्सर

त्योहारों के आखिरी दिन ही यह आयोजित किया जाता है। साधारणतः स्त्रीयां ही इसका आयोजन करती हैं। पर कहीं कहीं यह पुरुष भी करता नजर आता है। इसलिए कलाकार नमकीन, खट्टा या तीखा खाना छोड़कर केवल दूध और फल खाते हैं और सात से नौ दिन तक व्रत का पालन करते हैं। कलाकार की मानसिक तैयारी के लिए यह व्रत सहायक सिद्ध होता है। कळम को रचने के लिए पहले फर्श साफ किया जाता है और गोबर का परत डाला जाता है, और पूर्व – पश्चिम दिशा में हल्दी से एक लकीर खींचा जाता है। इसको आधार बनाकर ही कळम रचा जाता है। बाद में पूजा – कर्म चलता है फिर कळमपाट्टु शुरु होता है। कळम – पाट्टु की तीव्रता के साथ ‘सर्पम तुल्लल’ नृत्य करने वाले कलाकार का जोश भी बढ़ जाता और ‘तुल्लल’ के कलाकार भक्तजनों को आशीर्वाद देते हैं और उन्हें जीवन की परेशानियों को दूर करने के सलाह भी देते हैं।

### वेट्टेक्कोरुमकन – कळमेषुतु:

यह समाज की समृद्धि के लिए आयोजित किया जाता है। इसमें पांच वर्णों के अलावा एक और वर्ण का प्रयोग भी किया जाता है, वह है – श्याम वर्ण। यह हरा और काला रंग के मेल से बनाया गया चूर्ण है। इसकी प्रस्तुति के दौरान ‘नंतुणि’ (वाद्य उपकरण) बजाया जाता है। इस कळम में चित्रित रूप जंगली देवता का होता है। कळम रचना के बाद ‘तोड्टमपाट्टु’, ‘कळम मायिक्कल’ (कळम मिटाने का काम) आदि चलते हैं। कळम रचनेवाले कलाकार चित्र के नीचे से घुटन तक का आधा भाग मिटा देता है। ताड़ के पत्ते का इस्तेमाल करते हुए शेष भाग पुजारी मिटाते हैं।

इस परंपरागत चित्र कला को एक ऐसे निश्चित ढांचे के अंदर रखा गया है जिसके कारण यह आज भी अपरिवर्तनीय और दोहराव के स्वभाव की रह गयी है। अतः इसकी अपनी अलग महिमा रहती है। आवृत्ति या पुनरावृत्ति के स्वभाव के कारण इसमें कोई विकास नहीं हुआ है। विकास या बदलाव के अभाव में आज भी कळमेषुतु, भित्तिचित्र जैसी अनुष्ठान कलाएँ अपने प्रारंभिक रूप में ही विराजमान हैं। लेकिन ‘राजा रविवर्मा’ के समय से ही केरल के चित्रकला के क्षेत्र में काफी परिवर्तन आए हैं। इस समय अंग्रेजों के द्वारा कला के क्षेत्र में विशेष पाठ्यक्रम और भाषा को लाया गया और केरल की अपनी अनुष्ठान कलाओं को उन्होंने प्रोत्साहन नहीं दिया। इस परिवर्तन ने अनुष्ठान कला सम्बन्धी हमारे विचार एवं दृष्टिकोण को बदल दिया। इसके फलस्वरूप चित्र- प्रदर्शन एवं दर्शक जैसा नया परिप्रेक्ष्य पैदा हुआ। पहले, अनुष्ठान पर आधारित चित्रकला में दर्शकों का कोई महत्व नहीं था। धीरे धीरे चित्र की रचना फर्श, दीवार आदि से कागज़, कैनवास आदि पर होने लगी। चित्र रचना से संबंधित विषयवस्तु में भी काफी बदलाव आया। जो भी हो चित्रकला में कळमेषुतु का गहरा प्रभाव आज भी हमें देखने को मिलता है।